International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(1): 98-100

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(1): 98-100
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 08-11-2022
Accepted: 13-12-2022

Dr. Gauri Bhatnagar
Assistant Professor, Department of Sanskrit, Shri Durga Mahila Mahavidyalaya, Tohana, Fatehabad, Haryana, India

Corresponding Author:
Dr. Gauri Bhatnagar
Assistant Professor, Department of Sanskrit, Shri Durga Mahila Mahavidyalaya, Tohana, Fatehabad, Haryana, India

पुराणों में तत्त्वज्ञान

Dr. Gauri Bhatnagar

प्रस्तावना

पुराणों का आर्य वाङ्मय में विशेष स्थान है। पुराणों को पञ्चम वेद कहा गया है। [1] ' अथर्ववेद में तो पुराणों की उत्पत्ति अन्य वेदों के साथ बताई गई है। [2] आर्य संस्कृति के सर्वांगीण अध्ययन के लिये पुराणों का अत्यधिक महत्त्व है । पुराणों में तत्कालीन संस्कृति के प्रत्येक पहलू के दर्शन होते हैं। इसके साथ ही वैदिक अध्ययन के लिये तथा उन्हें समझने के लिये पुराणों का अध्ययन अनिवार्य है। [3] पुराणों ने वेद के अगम्य ज्ञान को जनसाधारण के लिये सुलभ बनाया। इसी परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत है पुराणों में वर्णित तत्व ज्ञान ।

तत्त्वज्ञान

पुराणों में अनेक रूपों में भासमान जगत् के मूल में एक सर्वशक्तिसम्पन्न तत्त्व की सत्ता स्वीकृत की गई है, जिसकी सत्ता से यह समस्त विश्व विद्यमान है। पुराणों में वर्णित उस परमतत्त्व के विभिन्न नाम हैं यथा- विष्णु, शिव, कृष्ण आदि। इन पुराणों में परमोपास्य तत्त्व के स्वरूप का विवेचन अत्यधिक रूचिरता तथा विशदता के साथ किया गया है। वह निर्गुण तथा सगुण दोनों रूपों में विद्यमान है। पुराणों में इस ईश तत्त्व की प्राप्ति हेतु ज्ञान, कर्म तथा भक्ति इन तीनों मार्गों का वर्णन है।

पुराणों में साध्य तत्त्व के रूप में ब्रह्म का विचार प्रस्तुत किया गया है। ब्रह्म चिन्तन कर्म आदि के साधनभूत मन-बुद्धि आदि करणों से सर्वथा रहित होने से अकरण है। तथापि समस्त अन्तःकरण तथा बाह्य करणों की शक्तियों से सम्पन्न है। वह ब्रह्म ही प्रकाशस्वरूप है। वही इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का शासक है, जिसके आदेशों का पालन करते हुये ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देव अपने कार्यों में प्रवृत्त होते हैं।' [4] वह ब्रह्म ही सनातन, परात्पर, निर्विकार, निरंजन, निर्गुण, निराकार, नित्य, निर्लक्ष्य, सर्वव्यापी, अव्यक्त तथा सर्वाधार है। [5] ब्रह्म नित्यमुक्त स्वभाव-सम्पन्न है।

वह माया से परे है, परन्तु जब संकल्प-मात्र से माया के साथ क्रीड़ा करता है, तब जीवों के सूक्ष्म शरीर तथा सुप्त कर्म-संस्कार प्रतिबोधित हो जाते हैं तथा जीवों की सृष्टि होती है। ब्रह्म में समत्व गुण की विशिष्टता है। कार्य-कारण रूप प्रपञ्च के अभाव होने से वह बाह्य दृष्टि से शून्य के समान प्रतीत होता है। [6] उसके उपासकों की दो श्रेणियाँ हैं- कुछ उपासक उसके निराकार, एकरस रूप का चिन्तन करते हैं तथा कुछ उसके सगुण स्वरूप की उपासना करता है। इन दोनों में वह किसी प्रकार का अन्तर न करके समान दृष्टि से उनकी सेवा तथा उपासना को चरितार्थ करते हैं। अपने प्राण, मन तथा इन्द्रियों को वश में करके योगाभ्यास के द्वारा उपासना करने वाले योगियों को जो गति प्राप्त होती है, वही गति उससे सर्वदा वैरभाव रखने वाले प्राणियों को भी प्राप्त होती है।" [7] वह स्वयं इन्द्रियरहित होते हुये भी समस्त जीवों की इन्द्रियों का प्रवर्तक है।

पुराणों में जो ब्रह्म निर्गुण ज्ञानरूप तथा आनन्दस्वरूप वर्णित है, वही निर्गुण ब्रह्म माया के साथ सगुण बन जाता है। [8] निर्धर्मक ब्रह्म में माया के द्वारा सर्वधर्मोपपन्नता तथा जगत्सृष्टत्व का गुण आ जाता है। [9] यह माया ब्रह्म की ही शक्ति है अतः शक्ति शक्तिमान् के अभेद सिद्धान्त से ब्रह्म से अभिन्न है। इसी माया के कारण ब्रह्म सृष्टि करने में समर्थ होता है। इस कारण जगत् का कारण ब्रह्म ही है [10] क्योंकि वही माया अथवा प्रकृति में सृष्ट्यनुकूल क्षोभ क्रिया को उत्पन्न करता है। [11] उसका यह निर्माण कुलाल के द्वारा मिट्टी से घटादि निर्माण तथा स्वर्णकार के द्वारा स्वर्ण से आभूषण निर्माण के समान है।" [12]

जीव के स्वरूप के सम्बन्ध में भी पुराणों में पर्याप्त विवेचन है। माया अथवा अविद्या में चैतन्य के प्रतिबिम्ब को जीव कहा गया है। [13] यहाँ पर तत्प्रतिबिंबकः शब्द परमात्मा का बोधक है क्योंकि इससे पूर्व परमात्मा का ही प्रतिपादन किया गया है।" [14] ब्रह्म शासक है तथा जीव उसके द्वारा शासित ब्रह्म नियामक है। तथा जीव उसके द्वारा नियम्य ऐसा तभी सम्भव है जब जीव ब्रह्म से उत्पन्न तथा उसकी अपेक्षा न्यून हो । परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि परमात्मा परिणाम के द्वारा जीव का निर्माण करता है। माया तथा ब्रह्म अजन्मा है। माया में ब्रह्म तथा ब्रह्म में माया के संयोग के कारण ही जीवों के अनेक रूप होते हैं। जिस प्रकार समुद्र में नदियाँ तथा मधु में समस्त फूलो के रस समा जाते हैं, उसी प्रकार समस्त जीव उपाधि-रहित होकर परमात्मा में समा जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जीवो की भिन्नता तथा उनका पृथक् अस्तित्व परमात्मा के द्वारा नियन्त्रित होता है। अतः जीव को पृथक्, स्वतन्त्र तथा वास्तविक समझना अज्ञान के ही कारण है । [15] वस्तुतः जीव तथा ब्रह्म में ऐक्य विद्यमान है, परन्तु संसार दशा में दोनों में भेद है। जीव मायाबद्ध है, इसके विपरीत ब्रह्म मायामुक्त है। जीव अपेतभागः अर्थात् ऐश्वर्य से हीन होता है। परन्तु ब्रह्म आत्तभगः अर्थात् ऐश्वर्य-सम्पन्न होता है। ब्रह्म नित्यसिद्ध, ज्ञान तथा अनन्त ऐश्वर्य से युक्त, अणिमा आदि अष्ट सिद्धि-सम्पन्न होने के कारण पूज्य है। इस प्रकार वस्तुतः अद्वैत होने पर भी संसार दशा में द्वैत प्रतिभासित होता है। [16]

"भगवान्, निर्गुण, सगुण, जीव जगत् सब वही है। अद्वयतत्त्व सत्य है। उसी एक अद्वितीय परमार्थ को ज्ञानी लोग ब्रह्म, योगीजन परमात्मा और भक्तगण भगवान् के नाम से पुकारते हैं। वहीं सब सत्त्वगुणरूपी उपाधि से अविच्छिन्न न होकर अव्यक्त निराकार रूप से रहते हैं, तब निर्गुण कहलाते हैं और उपाधि से अविच्छिन्न होने पर सगुण कहलाते हैं।" [17]

ब्रह्म के संकल्प-मात्र से माया क्षुब्ध होकर विचित्र कर्मों के फल देने के लिये जगत् की सृष्टि करती है। अतः सृष्टि में दृष्टिगोचर होने वाली विचित्रता तथा विषमता, कर्मों की विषमता के कारण ही है। जीव अनेक प्रकार के कर्म करता है, जिनके कर्मफलों को भोगने के लिये सृष्टि में उसका आवागमन चलता रहता है। अतः सृष्टि वैषम्य कर्मवैषम्यजन्य

है परमात्मा तो एकरस तथा समदृक् है, उसमें किसी प्रकार के वैषम्य की कल्पना पूर्णतः निराधार तथा अप्रामाणिक है।" [18]

निष्कर्ष

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आर्य-जीवन में वैदिक परम्परा को जीवित रखने तथा वेदानुगामी जनता को बचाये रखने का श्रेय पुराणों को है। इस प्रकार स्पष्ट है कि पुराण जन-जीवन के विभिन्न पहलुओं की झलक ही प्रस्तुत नहीं करते अपितु, अनेक आख्यानों, धर्मोपदेशों, सरलीकृत दर्शनों, दृष्टान्तों एवं मिथकों के अद्भुत भण्डार भी हैं।

संदर्भ

1. क- इतिहास-पुराणं च पञ्चमो वेद उच्यते । भागवत पुराण 1/4/20,70
   ख-ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदम् । छान्दोग्य उपनिषद् 7/1/2
   ग- इतिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदः । न्यायदर्शन 4/1/62
2. ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह ।
   उच्छिष्टज्जज्ञिरे सर्वे दिविदेवा दिविश्रितः ।। अथर्ववेद 11/7/24
3. क - इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृन्हणयेत् । महाभारत आदिपर्व 1 / 261
   ख- वेदार्थादधिकं मन्ये पुराणार्थं वरानने।
   वेदां प्रतिष्ठिताः सर्वे पुराणे नात्र संशयः ।। नारद पुराण 2/24/17
4. भागवत पुराण 10/28
5. ब्रह्मवैवर्त पुराण ब्रह्म खण्ड 3 / 79,4/ 4, 18/31-32, 28 / 21-22, 35, कृष्णखण्ड 18 / 36-37,43/63-64
6. भागवत पुराण 10/29
7. 4-वही 10/23
8. ज्ञानात्मकः शिवो ज्योतिरहमात्मा च निर्गुणः।
   यदा विशामि प्रकृतौ तदाऽहं सगुणः स्मृतः ।।
   सगुणः विषया विष्णु ब्रह्मरुद्रादयस्तथा ।। ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण खण्ड 78 / 28-29
9. करोति सृष्टिं स विधे विधाता विधाय नित्यां प्रकृतिं जगत्प्रसूम्।
   ब्ह्मादयः प्राकृतिकाश्च सर्वे भक्तिप्रदां श्रीं प्रकृतिं भजन्ति ।
   ब्रह्मस्वरूपा प्रकृतिर्न भिन्ना यया च सृष्टिं कुरुते सनातनः ।
   नारायणी सा परमा सनातनी शक्तिश्च पुंसः परमात्मनश्च ।। वही ब्रह्मखड 30 / 10,12,13
10. त्वमेव जगतां पतिः ।
    गतिश्च पाता स्रष्टा च संहर्त्ता च पुनर्विधिः ।। वही ब्रह्मखण्ड 3 / 78
11. प्रधान पुरुषो चापि प्रविश्यात्मेच्छया हरिः।
    क्षोभयामास सम्प्राप्ते सर्गकाले व्यायाऽव्ययौ ।। विष्णु पुराण 1/2/28-29
12. यथा मृदा कुलालश्च घटं कर्तुं क्षमः सदा।
    स्वर्णेन कुण्डलं कर्त्त स्वर्णकारः क्षमः यथा ।। ब्रह्मवैवर्त पुराण ब्रह्म खण्ड 28 / 27-28
13. वही, ब्रह्म खण्ड 17/26
14. हृदिस्थं च न जानासि परमात्मानमीश्वरम्।
    यस्मिन् गते पतेद्देहो देहिनां परमात्मनि ।। वही, ब्रह्म खण्ड 17 /24-25
15. न घटत उद्भवः प्रकृतिपुरुषयोरजयोरुभययुजा भवन्त्यसुभृतो जलबुदबुदवत् ।
    त्वयि त इमे ततो विविधनामगुणैः परमे सरित इवार्णवे मधुनि लिल्युरशेषरसाः ।। भागवत पुराण 10/31
16. वही 10 / 38
17. बलदेव उपाध्याय, पुराण विमर्श, 1985, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, पृ.509
18. भागवत पुराण 10/29